https://www.amitrakshar.co.in/journal : www.amitrakshar.co.in
Volume – 3 | Issue – III | May-June 2026 | ISSN: 3049-0278 (Online)

Amitrakshar International Journal
of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)
Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द के शैक्षिक विचार की प्रासंगिकता

By
Ghanshyam Singh[1]

Guided By
Prof.(Dr.) Shishir Kumar Bej[2]

सारांश
स्वामी विवेकानन्द ने स्त्री–पुरुश, धनी–निर्धन सभी में षिक्षा के प्रसार पर जोर दिया है। उनकी षिक्षा प्रणाली भारत की दार्षनिक और आध्यात्मिक परम्परा के अनुरूप थी। वे स्वदेष के जबर्दस्त हिमायती थे और पाष्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण के विरुद्ध थे। जहाँ उन्होंने एक ओर भारत को पाष्चात्य विज्ञान और प्रवृत्तिवाद अपनाने के लिए कहा वहीं उन्होंने दूसरी ओर ब्रह्मचर्य और अध्यात्म के प्राचीन आदर्षों को षिक्षा में सबसे प्रमुख स्थान दिया। युवक–युवतियों के लिए पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय उन्होंने साहस, आत्मविष्वास, एकाग्रता, अनासक्ति तथा उच्च नैतिक चरित्र के गुण निर्माण करने पर विषेश रूप से ध्यान दिया। उन्होंने षिक्षकों को षिक्षा देने के कार्य को व्यवसाय बनाकर एक मिषन के रूप में लेने की सलाह दी। उन्होंने सभी जगह संतुलित और समन्वयवादी दृश्टिकोण रखा।
मुख्य शब्द– स्वामी विवेकानन्द, षैक्षिक विचार , प्रासंगिकता

ISSN: 3049-0278 (Online) DOI (Crossref) Prefix: 10.63431
AIJITR - Volume- 3, Issue-III, May-June 2026

Copyright © 2026 by author (s) and (AIJITR). This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

प्रस्तावना

आधुनिक भारतीय शिक्षा जगत के इतिहास में स्वामी विवेकानन्द का स्थान अभूतपूर्व है उनके द्वारा प्रणीत शिक्षा सिद्धान्तों ने भारतीय शिक्षा को एक नयी दिशा दी है, स्वामी जी के शिक्षा सिद्धान्त वेदान्त दर्शन से प्रेरित हैं जिनका तत्त्व रूप हम भगवद् गीता में पाते हैं। विवेकानन्द जी ने बालक को वीर, निर्भय तथा कर्मनिष्ठ बनने पर बल दिया है जो कि शिक्षा के द्वारा ही संभव है। उनके चिन्तन के अनुसार भीरु, म्लान तथा उदासीन व्यक्ति जीवन में कोई कार्य नहीं कर सकता, इन सबका प्रभाव देश तथा समाज पर पड़ता है। अतः देश के निर्माण तथा उन्नति हेतु बालकों में त्याग तथा धार्मिक एवं नैतिक गुणों के विकास के साथ–साथ उन्हें भयमुक्त भी होना चाहिए क्योंकि भय तथा अधार्मिकता अधोलोक हैं, अतः भय मुक्त धार्मिक समाज की संरचना हेतु बालकों को शिक्षा उनके चिन्तन के आधार पर प्रदान की जानी चाहिए। आधुनिक सदी के महान विचारक एवं शिक्षा मनीषियों में सहृदय स्वामी विवेकानन्द का एक स्वतन्त्र चिन्तक एवं विचारक के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान नियत है। स्वामी विवेकानन्द ने भी कहा है कि 'शिक्षा उस सन्निहित पूर्णता का प्रकाश है, जो मनुष्य में पहले से ही विद्यमान है।' मानव जन्म से विलक्षण शक्तियों से ओत–प्रोत रहता है। उन शक्तियों का उचित दिशा में विकास करना शिक्षा का मुख्य कार्य है। शिक्षा के माध्यम से मनुष्य नाना प्रकार के ज्ञान और कौशल से युक्त हो समाज में अपने विचारों से क्रान्ति उत्पन्न कर समाज को उत्तरोत्तर उन्नति की ओर अग्रसर करता है। यदि ऐसे सन्दर्भों का व्यवस्थित विश्लेषण करते हुए सहज रूप में जन सामान्य की शैक्षिक आवश्यकता को इस परिप्रेक्ष्य में अग्रेषित किया जाय तो अवश्य ही उसकी नैतिकता में श्रीवृद्धि के साथ–साथ उसके जीवन के समस्त पहलुओं का पर्याप्त मात्रा में विकास सम्भव हो सकेगा।

1. Research Scholar, Department of Philosophy, University of Garakhpur, U.P.
2. Professor, Department of Education, Kolhan University, Jharkhand.

DOI Link (Crossref) Prefix: https://doi.org/10.63431/AIJITR/3.III.2026.85-89
AIJITR, Volume 3, Issue –III, May - June, 2026, PP.85-89
Received on 31th May, 2026 & Accepted on 10th June, 2026,
Published: 20th June, 2026.

https://www.amitrakshar.co.in/journal : www.amitrakshar.co.in
Volume – 3 | Issue – III | May-June 2026 | ISSN: 3049-0278 (Online)
Amitrakshar International Journal
of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)
Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

शिक्षा का अभिप्राय

स्वामी जी ने शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार किया है और भारत की निर्धनता एवं पतन का कारण एकमात्र अशिक्षा को बताया है। यूरोप के अनेक नगरों का भ्रमण करते हुये उन्हें शिक्षा की भौतिक उपलब्धियाँ भी दिखाई पड़ी। स्वामी जी तत्कालीन शिक्षा प्रणाली से दुःखी थे। उनका विचार था कि उस समय की शिक्षा मनुष्य का वास्तविक विकास नहीं करती थी। शिक्षा को मात्र सूचना तक नहीं सीमित करना चाहिए क्योंकि तमाम असम्बद्ध जानकारियों को एक गठरी में ठूस लेने से कोई लाभ नहीं किसी सूचना का अपने आप में कोई महत्त्व नहीं होता। जो विचार जीवन निर्माण में सहायक हो उनकी अनुभूति करना आवश्यक है। स्वामी जी के अनुसार केवल कुछ विचारों को रटकर डिग्री प्राप्त कर लेना शिक्षा नहीं है। स्वामी जी के अनुसार बालक का जब जन्म होता है तब वह आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों ही दृष्टि से अन्तःकरण में किसी न किसी स्थान पर अव्यवस्थित सा बिखरा रहता है। जब किसी विशेष अवसर पर यह अव्यवस्थित और बिखरा हुआ ज्ञान आवरण हटने के साथ–साथ प्रकाशित होने लगता है तब हम यह कहते हैं कि मनुष्य ज्ञानी है। ज्ञान सदैव मनुष्य के मन में निहित है। स्वामी जी शिक्षा के अर्थ के सम्बन्ध में रूसो से सहमत थे। जिस प्रकार पौधा प्रकृति के अनुसार बढ़ता है, उसी प्रकार बालक भी स्वयं पूर्णता को प्राप्त करता है बशर्ते कि एक माली की भाँति वह स्वयं ही देखभाल चाहता है। व्यक्ति में ज्ञान स्वतः निहित है। ज्ञान बाहर से नहीं आता वह तो अन्दर ही है। बालक को अपने अन्दर निहित ज्ञान का अन्वेषण करना है। मन में ही सारा ज्ञान निहित है, बाहरी संसार सुझाव या प्रेरणा मात्र देता है तब व्यक्ति अपने मन का ही अध्ययन करने के लिए प्रेरित होता है।

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा मानव में पहले से ही उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। उन्होंने स्पष्ट रूप से शब्दों के अर्थ को परिभाषित किया–''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।'' स्वामी जी के अनुसार–''भले ही एक व्यक्ति छोटा सा बुलबुला हो और दूसरा पर्वत के समान ऊँची तरंग, पर बुलबुला और तरंग दोनों के पीछे वही अनन्त सागर है। वही अनन्त सागर सबका आधार है जैसा मेरा, वैसा ही तुम्हारा भी। अतः अपनी संतानों को उनके जन्मकाल से ही इस महान जीवनप्रद उच्च और उत्तम तत्त्व की शिक्षा देना शुरू कर देना चाहिए निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जिस प्रशिक्षण से मनुष्य की इच्छाशक्ति का प्रकाश फलदायी हो, उसकी अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति हो वही शिक्षा सच्ची शिक्षा है। स्वामी जी के इसी प्रकार के प्रशिक्षण को ही शिक्षा माना गया है।

शिक्षा के उद्देश्य

स्वामी जी आदर्शवादी विचारक थे, चूँकि जीवन का आदर्श दर्शन होता है इसलिए उनके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के उद्देश्यों पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव है लेकिन उन्होंने प्रकृति और यथार्थ को नहीं ठुकराया। मन के समस्त झुकाओं और सभी प्रकार की प्रकृतियों का समन्वय चरित्र है। सुख–दुःख व्यक्ति की आत्मा पर अपनी छाप छोड़ जाते हैं। इन सभी प्रकार की छापों का समष्टि चरित्र है। विचारों से ही मनुष्य बनता है। अच्छे शब्द सुनने वाला, अच्छे विचार सोचने वाला, अच्छे संस्कार से युक्त होता है और इच्छा न होते हुये भी सत्कार्य करने के लिए विवश हो जाता है। जब व्यक्ति संस्कारवश अच्छे कार्य करता है तभी उसका चरित्र गठित हो जाता है यही चरित्र गठन शिक्षा का उद्देश्य है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार हमारी शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का निर्माण करना होना चाहिए। सारी शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य मनुष्य का विकास करना है। जिस प्रशिक्षण से मनुष्य की इच्छाशक्ति का विकास हो, वही शिक्षा है। शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करना ही नहीं होना चाहिए।

स्वामी जी का विचार था कि व्यक्ति को लौकिक एवं अलौकिक सद्गुणों को धारण करके ही दिव्य पुरुष की श्रेणी मिलती है। ये सद्गुण हैं– आत्मविश्वास, आत्मश्रद्धा, आत्मत्याग, आत्मनिर्भरता, मानवप्रेम आदि। इन्हीं सद्गुणों को प्राप्त करने के लिए स्वामी जी ने कहा, उठो, जागो और जबतक चरम लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए, तब तक लगे रहो। इसके परिणामस्वरूप मनुष्य भौतिक सुखों के साथ आध्यात्मिक आनन्द की भी तृप्ति महसूस करता है। इस प्रकार स्वामी जी शिक्षा के इस लक्ष्य को निर्धारित कर व्यक्ति का धार्मिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास चाहते थे। व्यक्ति को सदैव 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से प्रेरित रहना चाहिए। उन्होंने स्पष्ट किया कि सभी प्राणी समान रूप से पारस्परिक सभ्यता व संस्कृति का आदान–प्रदान करें व विश्वबंधुत्व की भावना का विकास करें।

पाठ्यक्रम

स्वामी जी के अनुसार पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसमें निषेधात्मकता न हो। छात्रों के समक्ष विधात्यमक या भावात्मक विचार रखने चाहिए न कि अभावात्मक या निषेधात्मक। देश को सफल एवं उन्नत बनाने के लिए जिन–जिन विषयों को पढ़ाने की आवश्यकता हो वे विषय अवश्य पढ़ाए जाए। वेदों को उन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। अतः वेदों का अध्ययन भी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत रखा और वैदिक मंत्रों की मेघ गर्जना द्वारा भारत में प्राण का संचार करने को कहा। संगीत शिक्षा के साथ–साथ स्वामी जी ने पाठ्यक्रम में धार्मिक शिक्षा देने की बात कही। उन्होंने कहा कि धार्मिक शिक्षा भी देनी है किन्तु आडम्बर से दूर रहना है। मन्दिर, मस्जिद, गिरिजाघर को स्वामी जी खिलवाड़ समझते थे। धर्म का क्रियात्मक अनुभव होना आवश्यक है केवल बौद्धिक प्रशिक्षण से छात्रों में मनुष्यता के गुणों का प्रादुर्भाव नहीं होता है।

पाठ्यक्रम में सत्य का समावेश होना चाहिए। सत्य आत्मा का स्वभाव है। शरीर, बुद्धि या आत्मा को कमजोर बनाने वाला तत्त्व सत्य नहीं होता सत्य में जीवन शक्ति होती है, वह बलप्रद पवित्र और ज्ञानस्वरूप होता है। स्वामी जी ने उपनिषदों को भी जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग माना है। उपनिषद् शक्ति के विशाल स्रोत हैं उनमें ऐसी प्रचुर शक्ति विद्यमान है कि वे समस्त संसार को तेजस्वी कर सकते हैं। स्वामी जी शिक्षा द्वारा मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक दोनों जीवन के लिए तैयार करना चाहते थे। उनके द्वारा

Published by: Amitrakshar Publishers – Amitrakshar International Journal of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
https://www.amitrakshar.co.in/journal/ : editor@amitrakshar.co.in DOI (Crossref) Prefix: 10.63431

Volume – 3 | Issue – III | May-June 2026 | ISSN: 3049-0278 (Online)

Amitrakshar International Journal
of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)
Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

निर्धारित पाठ्यक्रम को निम्न प्रकार से भी वर्गीकृत किया जा सकता है। 1. लौकिक 2. आध्यात्मिक

शिक्षण विधि

स्वामी जी ने शिक्षा की जो शिक्षण विधियाँ निर्धारित की हैं वे स्वयं में वैशिष्टता लिए हुए हैं। उनकी शिक्षण विधि धर्म से भी ओतप्रोत है व आध्यात्मिकता का रूप धारण किये हुये है। उनकी शिक्षण विधि चित्त की इच्छाओं को हनन करके मस्तिष्क को स्वीकृत करके शिक्षण देने पर बल देती है। उन्होंने योग के माध्यम से चित्त की प्रकृतियों को एकाग्र करने पर बल दिया है। मनुष्य का मन एकाग्र होने पर भी भ्रमित हो जाता है तथा निश्चित ग्राह्य वस्तु को ग्रहण करने में अक्षम साबित होता है। एकाग्रता द्वारा ही शिक्षण हो सकता है किसी अन्य विधि द्वारा नहीं। शैक्षणिक उपलब्धियाँ एकाग्रता की मात्रा पर निर्भर है एकाग्रता की शक्ति जितनी अधिक होगी ज्ञान प्राप्ति की सीमा उतनी ही अधिक होगी। एकाग्रचित होकर चर्मकार जूता अच्छा बनाता है, रसोइयाँ भोजन अच्छा बनायेगा, अर्थोपार्जक पैसा अधिक कमायेगा, ईश्वरोपासक अराधना अधिक अच्छी करेगा। ठीक उसी प्रकार यदि अध्यापक एकाग्रचित है तो अच्छा ज्ञान देगा। विद्यार्थी एकाग्रचित है तो अच्छा श्रवण करके ज्ञानार्जन करेगा। मनुष्य और पशु में भेद ही एकाग्रता को लेकर है। स्वामी जी के शैक्षिक विचारों में एक और शिक्षण विधि का उल्लेख आता है और वह है– व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श की विधि। इस विधि द्वारा मात्रात्मक समूहों में एकत्रित होकर व्यक्तिगत समस्याओं पर विचार किया जाता है। वर्तमान समय में इसका विस्तृत रूप भी दिखायी देता है।

सीखने में स्वाभाविकता का महत्त्व है। अतः बालक के मस्तिष्क में ज्ञान को ठूँसना नहीं चाहिए। बालक को सिंह बनने दीजिये, उसे बहुत अधिक परतंत्र मत बनाएं। बालक को सुधारने का या सिखाने का दम्भ व्यर्थ है उसे स्वाधीन करिए और उसे स्वयं सीखने के लिए प्रेरित करिए। स्वामी जी के शब्दों में, ''तुम किसी बालक को शिक्षा देने में उसी प्रकार असमर्थ हो जैसे कि पौधे को बढ़ाने में। तुम केवल बाधाओं को हटा सकते हो और बस ज्ञान अपने स्वाभाविक रूप से प्रकट हो जाएगा। जमीन को कुछ पोली बना दो ताकि उसमें ये उगना आसान हो जाए उसके चारों ओर घेरा बना दो और देखते रहो कि कोई उसको नष्ट न करे ऐसा ही बालक की शिक्षा के बारे में है। बालक स्वयं अपना शिक्षण करता है। शिक्षण की यह विधि भी महत्त्वपूर्ण है। स्वामी जी द्वारा समर्थित शिक्षण विधि में पुस्तकीय शिक्षण की प्रधानता नहीं है। पुस्तकों के अध्ययन को वे शिक्षा मानने को तैयार नहीं थे। उनके अनुसार पुस्तकों का अध्ययन किया जाय पर इस प्रकार नहीं जिस प्रकार आजकल किया जा रहा है। पुस्तकों को पढ़ने से यदि एकाग्रता विकसित नहीं होती, श्रद्धा का विकास यदि नहीं होता और छात्रों में आत्मविश्वास यदि जाग्रत नहीं होता तो उन्हें पढ़ाना व्यर्थ है।

शिक्षा का माध्यम

शिक्षा का माध्यम एक ऐसी समस्या है जो आज एक विकराल रूप धारण करती जा रही है। वैदिक युग में शिक्षा का माध्यम संस्कृत भाषा थी। शनैः शनैः इसमें परिवर्तन आया और एक ऐसा समय आया जबकि ब्रिटिश शासन ने संस्कृत के अस्तित्त्व को समाप्त कर शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी भाषा को बना दिया। अंग्रेजों ने प्राचीन शिक्षा प्रणाली को धराशायी कर दिया। स्वामी विवेकानन्द ने अपने द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बताया। उनके अनुसार शिक्षा मातृभाषा द्वारा प्रदान की जाय। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को स्वीकार करते हुये उन्होंने कहा– ''विदेशी भाषा की अपेक्षा स्वदेशी भाषा पर पहले अधिकार करना चाहिए क्योंकि स्वदेशी भाषा का अपने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। मातृभाषा पर अधिकार कर लेने के बाद विदेशी भाषा का अध्ययन हों सकता है लेकिन विदेशी भाषा शिक्षा का माध्यम नहीं हो सकती है। उन्होंने शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को स्वीकार किया। उन्होंने कहा–''मैं समस्त शास्त्र ग्रन्थों को भारत के प्रत्येक मनुष्य की सार्वजनिक सम्पत्ति बना देना चाहता हूँ। चाहे वह संस्कृत जानता हो या नहीं और यह कार्य मातृभाषा के माध्यम द्वारा सुलभ है।''मातृभाषा द्वारा शिक्षा प्रदान किए जाने पर वह सबके लिए उपयोगी और सार्थक होगी क्योंकि शिक्षा का माध्यम ही वह सुदृढ़ आधारशिला है जिस पर शिक्षारूपी भव्य भवन का निर्माण हुआ है।

शिक्षक

शिक्षक के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुये कहा गया है– ''गुरुब्रह्मा, गुरुः विष्णु, गुरुः देवा महेश्वरा, गुरुः साक्षात् पर ब्रह्म तस्मैश्री गुरुवेनमः।

निःसंदेह स्वामी जी ने भी शिक्षा की प्रक्रिया में गुरु की महत्ता बतलायी है। अध्यापक में उन सभी गुणों का होना आवश्यक है जो व्यक्ति को उच्च चरित्र, उत्तम व्यक्तित्त्व प्रदान करते हैं। स्वामी जी के अनुसार शिक्षा 'गुरु–गृह वास' है। शिक्षक अर्थात् गुरु के व्यक्तिगत जीवन के बिना कोई शिक्षा नहीं हो सकती है शिष्य को बाल्यावस्था से ऐसे व्यक्ति के साथ रहना पड़ता है जो पवित्र हो। शिक्षक का चरित्र अग्नि के समान प्रकाशमान हो जिससे उच्चतम शिक्षा का सजीव आदर्श शिष्य के सामने रहे और उसे उच्चतम आदर्शों की सच्ची मूर्ति होना चाहिए। उसे ज्ञान के दान के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए। ज्ञान का दान बिना त्याग के नहीं हो सकता। अतः उसे त्यागी भी होना चाहिए। स्वामी जी ने शिक्षक के तीन गुण बताये हैं प्रथम गुण उसका शास्त्रज्ञान है। वैसे तो सारा संसार ही, वेद, कुरान पढ़ता है, पर वे तो खेद शब्दराशि है , धर्म की सूखी ठठरी मात्र हैं। जो गुरु शब्दाडम्बर के चक्कर में पड़ जाते हैं जिनका मन शब्दों की शक्ति में बह जाता है, वे भीतर का मर्म खो बैठते हैं। जो शास्त्रों के वास्तविक मर्मज्ञ हैं वे असल में सच्चे गुरु हैं। अच्छा शिक्षक अवश्यमेव शास्त्रों के मर्म को जानता है, वह शब्दों के परे अर्थ को जानता है।

अनुशासन

अनुशासन का वास्तविक अर्थ अपने वास्तविक रूप में मनुष्य की आन्तरिक भावना नियंत्रण की शक्ति और सामाजिक आचरण इन सबका योग होता है। इस प्रकार अनुशासन के बारे में स्वामी जी ने कहा कि मारपीट, भय, दण्ड आदि के द्वारा बालक को अनुशासित

Published by: Amitrakshar Publishers – Amitrakshar International Journal of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
https://www.amitrakshar.co.in/journal/ : editor@amitrakshar.co.in DOI (Crossref) Prefix: 10.63431

https://www.amitrakshar.co.in/journal : www.amitrakshar.co.in
Volume – 3 | Issue – III | May-June 2026 | ISSN: 3049-0278 (Online)
Amitrakshar International Journal
of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)
Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

नहीं करना चाहिए। उनके अनुसार अनुशासन के संदर्भ में शिक्षक को मुक्तयात्मक सिद्धान्त को मानना चाहिए। अनुशासन स्थापित करने के लिए बच्चों को पूर्ण स्वतंत्र छोड़ना चाहिए और उन्हें अपनी मूल शक्तियों, रुचियों, स्थानों और योग्यतानुसार विकास के पूर्ण अवसर देने चाहिए। उसी स्थिति में ही बच्चे सही आचरण करते हैं। दूसरी तरफ स्वामी जी ने यह भी कहा कि विद्यार्थी में ब्रह्मचर्य का गुण हो तथा वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखे। उन्होंने अनुशासन स्थापित करने के लिए कहा कि ब्रह्मचर्य द्वारा ही ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों पर नियंत्रण संभव है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने में आंशिक रूप से सफल हो जाता है। यह एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें बालक एकाग्रता की चरमसीमा पर पहुँचकर स्वयं को ब्रह्म मानने लगता है उन्होंने इन्द्रियों को बेलगाम नहीं छोड़ा है। संयम, दान, ज्ञान, त्याग, तप, उपासना, व्रत आदि इन्द्रियों के नियंत्रण के आध ार हैं। **धार्मिक शिक्षा**

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का अन्तरतम केन्द्र धर्म बताया है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ''धर्म तथ्य का प्रश्न है न कि वार्तालाप का। हम लोग अपनी आत्मा का विश्लेषण करना पसंद करते हैं और पता लगाते हैं कि वहाँ क्या है। हम लोग जो समझना पसन्द करते हैं और जो कुछ समझते हैं उसकी अनुभूति करते हैं। यही धर्म है किसी भी मात्रा में वार्तालाप करने से धर्म नहीं बनता है।'' धर्म यदि एक ओर अनुभूति है और गुणों की प्राप्ति है और उनका प्रयोग है तो दूसरी ओर उत्कर्ष भी है। हमारे भीतर की कुछ दुर्बलतायें होती हैं। अज्ञानता एक दुर्बलता है इसके लिए हमें ज्ञानोत्कर्ष की ओर बढ़ना चाहिए और 'सत्य' का पता लगाना चाहिए जिसका मूलोद्गम् वेद, उपनिषद् वेदान्त आदि हैं। दूसरी ओर शारीरिक उत्कर्ष में रुचि लेते थे तभी वे सच्चे अर्थ में धर्म का पालन कर सके । इसलिए वे सभी को उपदेश देते थे कि स्वर्ग की प्राप्ति गीता पढ़ने की अपेक्षा फुटबाल खेलने से सरलता से प्राप्त हो सकती है। इसका कारण है कि शरीर हमारे देश में धर्म का साधन है। शरीर का बल होने से आत्मा का बल भी होता है और इस प्रकार व्यक्ति सद्धर्म को करता है। शरीर को बल कैसे मिलता है इसके लिए स्वामी विवेकानन्द ने ब्रह्मचर्य को प्रमुखता दी है। इसी ब्रह्मचर्य के बल पर शरीर और मन दोनों बलवान होते हैं। ब्रह्मचर्य विचार और कार्य दोनों रूप में होना आवश्यक है। अतः ब्रह्मचर्य का पालन और धारण करना धर्म शिक्षा के अन्तर्गत है, इसके लिए माता–पिता, गुरु और समाज उत्तरदायी हैं तथा व्यक्ति को स्वयं अभ्यास करने की आवश्यकता है। इससे स्पष्ट है कि विवेकानन्द के अनुसार धर्म एक तप और साधना है उसकी शिक्षा का एक क्रम भी है जो ऊपर वर्णित है। विवेकानन्द ने कहा भी है कि धर्म तो व्यक्ति में पुरुषत्व लाता है। वास्तविक रूप में धर्म धारण करने के लिए स्वामी जी का कथन है कि 'तुम क्यों विरोधों में लगते हो। विभिन्न मतों की बातों को बर्दाश्त करें। धैर्य, शुद्धता और सहनशीलता, विजयी होकर रहेंगे। वस्तुतः धर्म इन्हें ही धारण करके कार्य करने में होता है। इससे मनुष्य को बल मिलता है। असीम शक्ति धर्म है। शक्ति अच्छाई है। निर्बलता पाप है। धार्मिक शिक्षा प्रत्येक बालक को चमकदार, वीर और प्रत्येक लड़की को प्रकाशयुक्त वीरनी बना देता है। धर्म हर एक को निर्भय बना देता। भारत की दुर्दशा देखकर स्वामी विवेकानन्द ने धर्म शिक्षा को अनिवार्य रूप से देने के लिए कहा और यही कारण था कि उन्होंने धर्म शिक्षा का प्रचार न केवल भारत में ही किया बल्कि विदेशों में भी किया और हमारे देश में हीनहीं बल्कि अन्यत्र भी धर्म शिक्षा की आवश्यकता और महत्ता अनुभव की जा रही है।

निष्कर्ष

विवेकानन्द के अनुसार भारत में एक ऐसी शिक्षा–प्रणाली की आवश्यकता है जो प्राचीन वेदान्त की परम्परा पर आधारित होते हुए भी प्रत्येक व्यक्ति को जीविकोपार्जन के योग्य बनाए, जिससे प्रत्येक स्त्री–पुरुष अपने–अपने व्यवसाय में उन्नति करें। व्यवसाय कोई भी बुरा नहीं हैं छोटे से छोटे काम भी त्याग और सेवा की भावना से करने पर बड़े से बड़े काम के बराबर होता है। इस प्रकार की शिक्षा का संदेश घर–घर में पहुँचाया जाना चाहिए। इसका अभाव ही हमारी वर्तमान पतित दशा का कारण है। शिक्षा केवल विद्यालय में ही नहीं बल्कि घरों, खेतों में और कारखानों में भी होनी चाहिए। यदि बालक–बालिकाएँ विद्यालय तक नहीं पहुँचते तो शिक्षक को स्वयं उन तक पहुँचना चाहिए। इस प्रकार शिक्षक विद्यालय में बैठकर हीनहीं बल्कि घूम–घूम कर शिक्षा का प्रचार करें। वे स्थान–स्थान पर द्वार–द्वार पर जाकर घर–घर में शिक्षा फैलाएं। इस प्रकार का आदर्श भारत की प्राचीन वानप्रस्थ और संन्यास की परम्परा में दिखलाई पड़ता है। विवेकानन्द ने गाँव–गाँव में शिक्षण फैलाने के लिए एक व्यावहारिक सुझाव यह दिया कि दो–दो, तीन–तीन शिक्षक कैमरा, ग्लोब, मानचित्र इत्यादि उपकरणों को लेकर गाँव–गाँव और मोहल्ले–मोहल्ले जाएं, बालक–बालिकाओं को एकत्रित करें और उनको ज्ञान का प्रकाश दें। इस प्रकार से उससे कहीं अधिक तेजी से शिक्षा दी जा सकती है जो विद्यालयों में पुस्तकों से दी जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- कालरा, विनोद (2015) : वैश्विक परिदृश्य में स्वामी विवेकानन्द : राष्ट्रवादी चिन्तन एवं दर्शन, शोध मंथन, ISSN : 0976-5255, (e) 2454-339x, pp. 1-6
- पाण्डेय, नन्हकू (2011) : स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि महेश योगी के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, कानपुरः छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय।
- पचौरी, कान्ति (2014) : चिर ऊर्जा के प्रतीक स्वामी विवेकानन्द, रिसर्च जर्नल ऑफ लैंग्वेज एण्ड ह्युमिनिट्ज, वॉ0 1(1), पृ0 4–5
- परमजीत (2014) : स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ इन्फार्मेटिव एण्ड फ्युचरस्टिक रिसर्च, वॉल्यूम–2, इश्शू–2, पृ0 470–475
- मिश्र, अयोध्या (2012) : स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन, लघुशोध प्रबन्ध, रीवां : अवधेश प्रताप विश्वविद्यालय।

Volume – 3 | Issue – III | May-June 2026 | ISSN: 3049-0278 (Online)

Amitrakshar International Journal
of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)
Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

- वर्मा, अरूण कुमार (2013) : स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचार – सार्थकता एवं प्रासंगिकता, भारतीय आधुनिक शिक्षा, वर्ष 34, अंक 1, पृ0 45–48
- शर्मा, जितेन्द्र कुमार (2013) : स्वामी विवेकानन्द के चिंतन में राष्ट्रवाद, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थॉट, वॉ0 1, इश्शू–9, पृ0 1–7
- स्वामी विवेकानन्द (1973) : विवेकानन्द साहित्य, प्रथम खण्ड, अद्वैत आश्रम, मायावती पिथौरागढ़ ।
- स्वामी विवेकानन्द (1973) : विवेकानन्द साहित्य, दशम खण्ड, अद्वैत आश्रम, मायावटी, पिथौरागढ़ ।
- स्वामी विवेकानन्द (1958) : वेदान्त रहस्य, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।

Published by: Amitrakshar Publishers – Amitrakshar International Journal of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)
https://www.amitrakshar.co.in/journal/ : editor@amitrakshar.co.in DOI (Crossref) Prefix: 10.63431